लोकगीतों के आलोक में स्वतंत्रता संग्राम की झलक

पराधीनता के दरम्यान स्वाधीनता की आकांक्षा तथा राष्ट्रीयता की भावना देर-सबेर जगना लाजिमी है, क्योंकि स्वतंत्रता मनुष्य की नैसर्गिक प्रवृत्ति है, मूलभूत सौंदर्य है। आजादी के समय का लोक साहित्य इसी लोकभाव की अभिव्यक्ति है। लोकगाथाओं, लोकनाटकों के द्वारा ऐसी अनेक घटनाओं, प्रसंगों का जीवंत रूप प्रदर्शित करने का कार्य हुआ, जो राष्ट्रीय चेतना जागृत करने में सहायक हो सकते थे। सबसे अधिक लोकगीतों ने लोकमन के भावों को वाणी दी। तत्कालीन अंग्रेजी हुकूमत की आलोचना करते हुए देशवासी अपने स्वर्णिम अतीत का गुणगान और वर्तमान की कंगाली का आकलन करते हुए कहने लगे कि भारत के लोग दाना-दाना के मुहताज हैं तो दूसरी ओर लंदन में कुत्ते भी गुलछर्रे उड़ा रहे हैं -

होइ गइले कंगाल हो विदेसी तोरे रजवा में।
सोनवा के थाली जहवाँ जेबना जेवत रहली।
कठवा के डोकिया के होइ गइल मुहाल हो।
भारत के लोग आज दाना बिना तरसै भइया।
लन्दन के कुत्ता उड़ावे माजा माल हो।।

ऐसी स्थिति में बिहार-पूर्वी उत्तर प्रदेश के लोकगीतों में युवकों से आग्रह किया गया कि वे अपने यौवन के ओज और उबाल से गुलामी की बेड़ियाँ काट डालें। इसी में जवानी की सार्थकता है। आखिर वह जवानी-रवानी किस काम की, जो देश के हित काम न आ सके -'मातृभूमि तो खोज रहल बा, गरम खून कुर्बानी के/हे भारत के लाल दिखावऽ जौहर अपना जवानी के।' जवानी के शौर्य और सौंदर्य का एहसास गीतों-गाथाओं से अधिक कहाँ हो सकता है? गीत के नाम पर तब लोकगीत ही प्रचलित थे। लोकधर्म का भलीभाँति निर्वाह करते हुए और यहाँ के योद्धाओं और हुतात्माओं की विस्मृति को स्मृत करते हुए उन्हीं के रंग में अपनी ओढ़नी, चुनरी व चादर रँगाने की अभिलाषा प्रकट होने लगी -'चुनरिया रंग दैयो मोरे यार/भारत के रनबीरों की हो/जी में ललक अपार।' इस प्रकार लोकगीतों से आजादी के आंदोलन को नई ऊर्जा व बल मिला। और तो और, पुत्र-जन्म के अवसर पर गाए जाने वाले सोहर में भी संतान के देशसेवक बनाने की इच्छा व्यक्त होने लगी -

पुतवा के देवो भारत माता के सेउवा में, मातवा के सेउवा में नु हो।
ललना, पूत करिहैं देसवा के काम, त जनम सुफल होइहैं नु हो।
मनवा में इहे अभिलास, इहे एक साध, इहे एक सधिया नु हो।
ललना पूत मोर होवे देस सेवक, राम से विनती करो हो।

पुत्र-पति ही क्यों, स्वयं स्त्री भी कहाँ पीछे रहने वाली थी। उसने एक ओर अपने पिता, पति व पुत्र को स्वातंत्र्य समर की ओर प्रयाण कराया, तो दूसरी ओर स्वयं भी देश की खातिर सारे सुखों को त्यागने और कष्ट झेलने का मानस बनाया; भोगवाद से विरक्त होकर 'योग' की राह चुनने का निश्चय किया। किसी लक्ष्य के प्रति अविचल, समर्पित साधना में तल्लीनता और कर्म कुशलता योग हैं; इसलिए औरत ऐसी जोगिन बन जाना चाहती है, जो स्वातंत्र्य संघर्ष के निमित्त सदैव तत्पर रहकर पूरे भारत को एक सूत्र में बाँधने का कार्य करती रहे, पति के हाथ में हाथ डालकर भूख-प्यास सहते हुए भी देशसेवा में निरत रहे -

जो पिया बनिहें रामा देसवा लागि जोगिया।
हमहू बनि जइबो तब जोगिनिया ए हरी।।
देसवा के निंदिया रामा सोइबो अरु जगइबो।
देहिया में रमइबो भल भभुतिया ए हरी।।

जब देश की खातिर गाँधी, नेहरू, सुभाष, मजहरूल हक, राजेन्द्र प्रसाद आदि अनासक्त होकर, सब कुछ छोड़-छाड़कर स्वातंत्र्य-साधना में लीन हो सकते हैं, तो फिर आमजनों को क्यों नहीं इस साधना-पथ का पथिक बनना चाहिए। सामान्य जनों की सहभागिता के बिना नेताओं की साधना सफल नहीं हो सकती, जनसमर्थन के बिना आजादी की मंजिल नहीं मिल सकती थी। आधी आबादी की भी सहभागिता समय की आवश्यकता थी -

गाँधी, सुभास ओ जवाहर भइले जोगिया, कि देस लागि हो।
सखिया तू बनहू जोगिनिया कि देस लागि हो।
काटि देहु, काटि देहु, काटि देहु बहिनो कि काटि देहु हो।
भारत मइया के विपति के जालवा कि काटि देहु हो।

लोकगीतों की टेक, गद्यात्मक-पद्यात्मक नारे लोगों को कंठस्थ हो गए थे। उनकी एक पुकार एकत्र व एकजुट होने तथा जोश जगाने के लिए पर्याप्त थी। रणबाँकुरे ऐसे जोशीले नारों-टेकों व संकल्प-गीतों को उच्चरित करते स्वातंत्र्य-लक्ष्य की ओर बढ़ते रहे। अनेकों ने स्वतंत्रता की बलिवेदी पर अपने प्राणों की आहुति तो दी, पर स्वाधीन स्वरों को मंद नहीं पड़ने दिया। इन्हीं दिनों भारत को माता का वैभव देकर उसकी आबरू को अक्षुण्ण रखने का संकल्प-गान रचा गया। देश को माता रूप देने का कार्य श्रीअरविन्द ने मुख्य रूप से किया। आज भी 'भारत माता की जय' और 'वंदे मातरम्' भारतीय जनता विशेषकर हिन्दू जनता को काफी उत्साहित करता है। ब्रजभाषा सहित अन्य बोलियों के लोकगीतों में भारत के माता-रूप का अवधान दर्शनीय है -

झंडा आगू बाजे बाजा, सुनते मन मे जोश हमाय।
भारत माता के जय बोले, धरती आसमान गुँजाय।।

स्वतंत्रता संग्राम के दिनों में भारत भर में अंग्रेजों के विरुद्ध हुए संघर्ष के पीछे राष्ट्रीयता का विकसित होता रूप था, तो दूसरी ओर स्थानीय-क्षेत्रीय स्तर की अपनी अलग अपेक्षाएँ थीं। एक निमाड़ी लोकगीत में क्रांतिवीर चन्द्रशेखर आजाद, भगत सिंह, राम मनोहर लोहिया, जयप्रकाश नारायण के योगदान का अंकन है-'चंद्रसेखर भगत लोहिया जुरे जय प्रकाश हो/रूख होई एक दिन खेते के काँस हो।' इन नेताओं के नाम पर पूरा जनमानस उद्वेलित हो जाता था। भोजपुरी क्षेत्र के लोग स्वयं को अगली कतार में रखने के लिए प्रतिबद्ध हो जाते थे -

जब जब बापू कइलन पुकार, रन में बाजल बिगुल तोहार,
सिर पर बाँध बाँध कफन आपन, हम छोड़ि दउरलीं घर दुलार,

स्वतंत्रता के संघर्ष में न जाने कितनी यातनाएँ लोगों ने और उनके परिवार वालों झेलीं, कितने घायल हुए, कितने जेल आते-जाते रहे और कितने उसमें तड़पते रहे -'गाँधी के आइल जमाना देवर जेलखाना गइले।' जेल तो तब बहुत लोगों का घर-बार हो गया था, लेकिन फर्क यह था कि वहाँ तरह-तरह की प्रताड़नाएँ झेलनी पड़ती थीं। जब लोग जेल जाते थे, तब आक्रोश और भड़कता था। भगत सिंह, राजगुरु, सुखदेव जैसे वीरों को फाँसी दी गई तो चारों ओर गुस्सा भड़क गया। इसका दर्द लोकगीतों में अभिव्यक्त हुआ कि जुल्मी शासन-सत्ता का कब अंत होगा, कब जेलों में मर रहे कैदियों को मुक्ति मिलेगी और स्वशासन की स्थापना होगी -

आज मातृभूमि को दुखी देख, भारत के वीर भड़क उठे।
वा जालिम जगह याद आवै, जहाँ भगतसिंह फाँसी लटके।

यह असंतोष आजादी के आंदोलन की ओर उन्मुख होता रहा। लोगों में यह विश्वास प्रबल हुआ कि जेल जाना निरर्थक नहीं जाएगा और शहीदों की शहादत रंग लाएगी और आज नहीं तो कल देश स्वतंत्र होकर ही रहेगा -'खून सहीदन को रंग लावै/तेरी हस्ती ऐ खाक मिलावै।' एक भोजपुरी 'कजली' में काले पानी का चित्र उकेरा गया है। सब लोग काशी विश्वनाथ जाते हैं, लेकिन सेनानियों के भाग्य में काला पानी बदा है। काले पानी की खबर सुनकर सब लोग स्तब्ध हैं। माँ-बहनों का रोते-रोते बुरा हाल है, पत्नी बेहाल है, सारे ढाल-तलवार यों ही खूँटी पर टँगे हुए हैं, संगी-साथी चिंतित हैं, क्योंकि अंग्रेजों के समय काले पानी का खौफ बहुत था -

सब कर नैया जालाऽ कासी हो बिसेसर रामा,
नागर नैया जालाऽ काला पनियाँ रे हरी।
घरवा में रोवै नागर, माई और बहिनियाँ रामा,
सेजिया पै रोवै बारी धनिया रे हरी।
खूँटिया पै रोवे नागर ढाल तरवरिया रामा
कोनवाँ में रोवेऽ कड़ाबनियाँ रे हरी।

जो मैं जनत्यूँ नागर जइबा काले पनियाँ रामा
तोरे पसवाँ चलि अवत्यूँ बिनु रे गवनवाँ रे हरी।

खड़ी बोली अथवा कौरवी के लोकगीतों द्वारा आवेग-आवेश भरते हुए कहा गया। भगत सिंह, राजगुरु, सुखदेव की फाँसी के बाद उनका नाम स्वर्णाक्षरों से अंकित होगा, लेकिन उनकी कुर्बानी और बलिदान तभी सार्थक होगा, जब लोग उन्हीं की तरह आजादी के दीवाने बनेंगे, उनकी अनुपस्थिति में उनकी भूमिका निभाएँगे। भगत सिंह, बटुकेश्वर दत्त, जतीन्द्रनाथ की स्मृति ब्रजभाषा में निम्नवत हुई -

भगतसिंह बटुकेश्वर बंदो जिन्हें देश के डरपै काल।
नौकरशाही थर थर काँपे जैसे गरुड़ देख के काल।
जतीन्द्रनाथ के चरण कमल को सिर धर बंदो बारंबार।
प्राण छूट पै प्रण नहीं छूटे तिरसठ दिन नहीं कियो अहार।

जब वर्तमान की दशा खराब होती है तो अतीत चाहे कैसा भी रहा हो, वह सुहावना ही लगता है। भारत का अतीत तो वैसे भी गौरवशाली है। हिन्दी और उसकी बोलियों में अनेक ऐसी लोक-रचनाएँ सृजित हुईं, जिनसे जनमानस उद्वेलित हुआ। भारत के अस्तित्व और अस्मिता का गहराई में भान कराया गया, फलतः सरकार को प्रतिबंधित करना पड़ता था। मनोरंजन प्रसाद सिंह की 'फिरंगिया' है तो कविता, किंतु इसने तत्कालीन लोकगीतों जैसी लोकप्रियता प्राप्त की और जन-मन में कंठस्थ हो गई -

सुंदर सुघर भूमि भारत के रहे रामा,
आज उहे भइल मसान रे फिरंगिया।
अन्न जन बल बुद्धि सब नाश भइले,
कवनों ना रहल निशान रे फिरंगिया।

रघुवीर शरण की लोक-कविता 'बटोहिया' में भारत के स्वर्णिम अतीत का रूप दर्शन और भारतीयता की अद्‌भुत झाँकी दिखाई देती है। इसमें भारत की चौहद्‌दी की विशेषता बताई गई है कि तीन तरफ दक्षिण, पूरब और पश्चिम में सागर और उत्तर की ओर खड़ा हिमालय इसकी पहरेदारी करता है -

सुंदर सुभूमि भइया भारत के देसवा से, मोरे प्राण बसे हिम खोह रे बटोहिया।
एक द्वार धरे रामा हिम कोतवलवा से, तीन द्वार सिंधु घहराई रे बटोहिया।

जब व्यक्ति, समाज और देश पर आसन्न संकट हो, तब देशवासियों को अपने महानायकों की याद आती है। इससे ढाढ़स बढ़ता है, संघर्ष की प्रेरणा मिलती है। गौरवपूर्ण इतिहास जिजीविषा और जीवटता के साथ अनवरत संघर्ष करने की प्रेरणा देता है। विजय का विश्वास देता है। 'बटोहिया' में ही आगे चित्रित है कि एक से बढ़कर एक विभूतियों की जन्मस्थली और कर्मस्थली भारत पूरे विश्व का निचोड़-निष्कर्ष है -

अपर प्रदेश देश सुभग सुघर वेश, मोर हिन्द जग के निचोड़ रे बटोहिया।
सुंदर सुभूमि भैया भारत के भूमि जेहि, जन 'रघुवीर' सिर नावे रे बटोहिया।

स्वतंत्रता संग्राम में अनेक स्वातंत्र्य प्रेमियों ने अनथक परिश्रम किया, अपनी कुर्बानी दी। नेताजी सुभाषचन्द्र बोस उनमें एक अग्रगण्य नाम हैं। वे गरम दल के सेनानी थे, अंग्रेजों का मुकाबला करने के लिए आजाद हिन्द फौज की स्थापना की और जापान, जर्मनी आदि से सहायता लेकर अंग्रेजों को अपदस्थ करना चाहा। संसाधन व सहयोग के निमित्त अंग्रेजी सत्ता से बचकर देश-विदेश भटकते रहे। हालाँकि उनकी हवाई दुर्घटना में हुई मौत आज भी पहेली बनी हुई है कि वह कितनी साजिश थी और कितनी दुर्घटना? लेकिन उनकी मृत्यु पर, जिनका उनसे अधिक मतभेद था, उन गाँधी जी और जवाहरलाल नेहरू ने भी अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए उन्हें भारत माता का सच्चा सपूत कहा -

भारतमाता तेरे फिकर में, बाबू चन्दरबोस गया,
बेरा नापटे कित फिरै भरमता, होकर तेरा पूत गया।
चुगलखोर ने चुगली की थी, महारे देष भारत को,

महात्मा गाँधी जवाहर नूँ कहै, म्हारा भरा भराया लाल गया।

गाँधी जी ने अंग्रेज सरकार से सब मोर्चे पर असहयोग करने और सब काम-धाम छोड़कर आंदोलन में भाग लेने का आह्वान किया, लेकिन फिर भी अनेक लोग अपने मुनाफे के करोबार में ही डटे रहे, तो तरह-तरह के गानों से उनको उत्प्रेरित करने का प्रयास किया जाने लगा -

देसवा में गाँधी जी त अँधिया बहवले बाड़े, मानु मानु उनुकर कहल रे ओकिलवा।
जाई कचहरिया ते झूठ साँच बोलऽ तारेऽ, ठगऽ तारेऽ गउवा के लोग रे ओकिलवा।
लाज नाहीं लागे तोरा झगड़ा लगावला में, भाई भाई आपसे में लड़वले रे ओकिलवा।

मुनाफे के व्यवसाय में व्यवसायी-पूँजीपति, तो कई राजे-रजवाड़े अपनी राजसी सुख-सुविधाओं में मदमस्त रहे। किसी तरह उनकी सल्तनत बची रहे -इसके लिए अंत समय तक मोल-भाव करते रहे, हालाँकि ब्रिटिश हुकूमत ने एक-एक कर सब को चकमा दिया, एक को मिलाकर दूसरे को पस्त किया। इससे क्षुब्ध जनता सामंतशाही की जड़ें उखड़ने पर उत्फुल्ल हो जाती थी, अपनी प्रसन्नता खुलकर व्यक्त करती थी। आजादी के बाद भी इन रजवाड़ों को भारतीय गणराज्य का अंग बनाने में काफी मशक्कत करनी पड़ी। बहरहाल, जब स्वतंत्रता मिली तो हर्षातिरेक का ठिकाना न रहा -'आजु भइल भारत में सुराज, आपन बोली आपन बिचार/आपन घर में आपन बा राज'; किंतु उसके बाद जब आजादी के सपने पूरे होते नहीं दिखे और जनता की आशाएँ, आकांक्षाएँ एक-एक कर धूल-धूसरित होने लगीं, तो लोक साहित्य को लोक की आवाज बनाकर जनचेतना को जागृत करने का प्रयास होने लगा। आजादी के तुरंत बाद गाँधी जी का अनशन हुआ और उसके बाद उनकी हत्या हो गई तो चारों ओर हाहाकार मच गया। लोक साहित्य में भी यह कोहराम दिखा। गाँधी जी स्वतंत्रता संघर्ष के अकेले नायक नहीं थे, पर वे बड़े महानायक के तौर पर स्वीकार्य हो गए थे। हरियाणवी लोकगीतों में गाँधी जी की हत्या पर क्षोभ प्रकट हुआ -'ऐ नत्थू राम तूणे जुलम करा, कैसे मारा गाँधी।' अधिकतर लोगों ने नाथूराम गोडसे के नृशंस कृत्य की भर्त्सना की। हरियाणा के एक लोकगीत में यह अभिव्यक्त हुआ -

भारत का चंदरमा छिपग्ये, रहे बिलखते तारे,
नत्थू नीच मरहटा था, जिन्नै आन गाँधी जी मारे।

आजादी से पहले हर समस्या का समाधान स्वतंत्रता-प्राप्ति में देखा गया था, किंतु सारे सपने तो यों भी पूरे नहीं होते, बाकी शासन-प्रशासन की अकर्मण्यता तथा लापरवाही के कारण और जटिल होते गए। उम्मीद थी कि किसान-मजदूरों का दमन बंद होगा। संप्रदायवाद, जातिवाद, क्षेत्रवाद की जड़ें कमजोर होंगी। स्वतंत्रता, समानता और भाईचारे की भावना स्थापित होगी। बड़े पैमाने पर आधुनिकीकरण होगा, लोगों का जीवन स्तर सुधरेगा। एक हरियाणवी लोकगीत में यह स्वप्न व्यक्त हुआ है -'भारतवासी कहै या आजादी कूँ गंगा, इसे धाम बणा देगी।' लेकिन जब सपने साकार नहीं हुए, तब अखिल भारतीय और स्थानीय दोनों स्तरों पर अंतर्वेदना फूट पड़ी -'गराबू की दुन्याँ मा धनवानू को राज/हम भूका मरया वो वण्या सिरताज' यानी भूख से मर रहे दुखी गरीबों के समाज में धनवान लोग सत्ता-स्वामी बने बैठे हैं। ब्रज के एक लोकगीत में क्रांतिकारियों की अमर बलिदान-गाथाओं को स्मृत रखने को कहा गया; साथ ही एक होने, शक्तिशाली बनने और धर्म का मार्ग प्रशस्त करने का संदेश दिया गया है -

भूल न जइयो भारतवासी उन वीरन की कुर्बानी।
हँसते-हँसते प्रान गवाए अमर रखो माँ कौ पानी।